।। भूमिका।।

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुः गुरुर्देवो महेश्वरः।
गुरुस्साक्षात्परब्रह्म तस्मै श्रीगुरवे नमः।।
नास्ति तत्त्वं गुरोः परम्।
यस्य देवे परा भक्तिः यथा देवे तथा गुरौ
तस्यैते कथिता अर्थाः प्रकाशन्ते महात्मनः।

इत्यादिभिश्शास्त्रवचनानुसारिभिरस्माभिर्गुरुगुणगौरवज्ञानाढ्यैरवाप्यत एव किञ्चिद्विशिष्टतरम्मोद्यतथ्यम् आत्मोत्थानैकमार्गाश्रितलभ्यप्रचोदनपरम्। श्रीमद्बाबागुरुरित्युपाध्यभिभूषितभवभक्तिभृतां श्रीश्यामसुन्दरशर्मगुरूणाञ्चारित्र्यमनुशीलयद्भिरेवास्माभिस्तत्रानेकबुधावृतनगरे नरवराभिधे छात्रकाल एषामेव गुरूणामाश्रमे हनुमद्धामाख्ये व्यतीतम्मोदानुसारिपदादिशास्त्ररक्तैरपि धर्मशास्त्रप्रियैरनेकशास्त्रवृष्टिस्नातविभातचित्तैः। ते च शिवशास्त्रतपोदत्तजीवना जाह्नव्यनुरागरञ्जितचेतसस्सदैव सन्तिष्ठन्ते स्वकीयाश्रमेऽध्यापयन्तो नव्यायुषो बटून्नैकशास्त्राण्यपरिग्रहाद्यनेकगुणाढ्यास्ते शिवाढ्याश्शिवाढ्यशास्त्रशोभिताश्शुभतामयन्ते नाययन्त्यन्याँश्चापि। कीर्तिकञ्चनकामिन्यादिविरागाः विरागैकरागाः धृतश्रौतकर्मविभागाः दर्शनविभागाध्यक्षास्साक्ष्यं यान्त्यद्याप्यस्मिन् भूतले धर्मध्वजोद्वाहकत्त्वेन। वस्तुतश्शास्त्राणामीदृक्तेजस्त्वं यद्दृश्यते तत्र, तत्तेषान्तपसामलौकिकपक्षभ्राजकतानाञ्च गाथाङ्गीयमानं नृभिर्लक्ष्यते।
शतकमिदम्बाबागुरूणामभिनन्दनात्मकञ्जनेनानेनोद्गुम्फितन्नैवात्र तेषाञ्जीवनजातघटनादिलेखनमत्रोदभाव्यपितु

प्रायस्तेषाम्प्रमुखगुणानाम्बुधत्त्वस्यैव चामोदचोदबोधदर्शनमकारि ये जनस्यास्याक्षिलक्ष्यतामुपयातास्समैर्दशभिस्तत्राश्रमे निवसतो नरवरस्थे लब्धगुरुसन्निधिकस्य। सनातनधर्मधारकेषूच्चपदप्रतिष्ठितास्तेऽस्मदीया गुरुचरणास्स्वपार्श्वस्थाँस्तु कुर्वन्त्येव धन्यानपि च, तद्दर्शनागतदूरदैशिकजनैश्चाप्यालभ्यत एव धर्मतथ्योद्भासस्तत्तपोवागवगाहनेन। शतकमिदम्मया २०१५ तमे

ख्रिस्ताब्दे रचितमधुना २०१९ तमे ख्रिस्ताब्दे च प्रकाश्यते, अतोऽधुना मामकी लेखनशैली चापि काचिद्भिन्ना जाता, या च मामकेषु २०१७-१८-१९ तमेषु ख्रिस्ताब्देषु लिखितेषु सूर्यशतक-वन्द्यश्री-भावश्री-काव्यश्री-प्रभृतिष्वन्येषु काव्येषु भवद्भिर्दृक्ष्यते। मयैवेदं हिन्द्यामनूदितं क्वाचित्कटिप्पणीभिश्चाप्यलङ्कृतम्। किमधिकम्ब्रवाणि, नीरक्षीरविवेकिपुरुषहस्तगतमिदं शतकं स्वयमेव स्वगुण्यपुण्यप्रतिष्ठामाप्नुयादित्याशाऽऽश्वस्तोऽहं

- **हिमांशुगौडः**

✻✻✻✻✻✻✻✻

।।शुभाशंसनम्।।

नरत्त्वं विद्वत्त्वं कवित्त्वं विशिष्टकवित्त्वशक्तिमत्त्वञ्चैतत् सर्वम्
एकस्मिञ्जने दुर्लभमित्यनेकधाऽऽचार्यैरुद्घुष्टम्, परन्त्वेतत् सर्वं
दौर्लभ्यमेकत्रास्मिन्महाभागेऽस्माकं सतीर्थ्ये

हिमांशुसमाह्लादकत्त्वसुधास्राविकत्त्वकवित्त्वप्रभा-सम्पन्ने
हिमांशुगौडमहोदये विराजते। प्रतिभाशालिनाऽनेन यूना कविना
श्रीबाबागुरुशतकमित्यद्भुतं गुरुमहिमप्रदर्शकं कार्तज्ञात्मकं काव्यं
विरच्य महानुपकारः कृतोऽस्मासु काव्याराधनारतेषु।
गुरुभक्तिप्रवर्धकेऽस्मिन्नप्रतिमे काव्यसृजनमहायाग
आराध्यत्त्वेनाङ्गीकृतानां
श्रीमज्जीवनदत्तपदपद्माश्रितानां श्रीमत्स्वामिविष्णवाश्रमशिष्याणां
श्रौतस्मार्तसिद्धान्तविज्ञानां
विविधविधविद्याविलसितान्तःकरणानां नरवराश्रमविभूषणानां
तपःस्वाध्यायप्रवचननिरतानामसङ्ख्यासहायबटुवृन्दाभिभावका
नाम्पूज्यपादानां ब्रह्मचारिकुलकमलप्रभाकराणामस्माकं
गुरुपादानां श्रद्धेयश्रीश्यामसुन्दरशर्म्मणामदुष्यं वैदुष्यं सौमनस्यं
सौरस्यं सारल्यं साधुत्त्वमौदार्यं च वर्णितमस्ति।
एतदर्थमस्यानुत्तमस्य काव्यसृजनानुष्ठानस्यानुष्ठातुश्च सौगन्ध्यं
सर्वत्र प्रसरेदित्यभ्यर्थना भगवत्या राजराजेश्वर्याः ललिताम्बायाः
पादपद्मेष्वस्ति।

श्रीगुरुकृपाधनसम्पन्नः
त्र्यम्बकेश्वरश्चैतन्यः

।।श्रीबाबागुरुशतकम्।।

✻✻✻✻

प्रत्येकमक्षरं लब्धं शिवशास्त्राम्बुधेर्यतः।
तं श्रीबाबागुरुं नत्त्वा शतकं रच्यते मया।।१।।

मैंने प्रत्येक अक्षर, जिन कल्याणप्रद-शास्त्रों के समुद्र स्वरूप
श्रीबाबागुरुजी से पढा है, उनको नमस्कार करके मैं (हिमांशुगौड)
यह शतक लिख रहा हूँ।

गङ्गातटग्रामनिवासिविप्र-
गृहे प्रजातो द्विज एष शैवः
कृष्णप्रियश्श्याम इति प्रसिद्धिं
बाल्ये जनैराप्य प्रवर्धितश्च।।२।।

गङ्गा तट पर स्थित (हैदलपुर) गांव में रहने वाले एक ब्राह्मण के
घर में, इन्होंने जन्म लिया। ये शुभ-मार्ग का अनुसरण करने वाले
(शैव) एवं कृष्णप्रिय, बाल्य-काल में लोगों द्वारा **श्याम** इस
प्रसिद्धि को प्राप्त, ये धीरे-धीरे बड़े हुए।

वैराग्यसन्त्यक्तगृहः किशोरो
विहाय सर्वं शिवभक्तिमाप्य
बिहारघट्टं समुपाश्रयच्च

श्रीविष्णुसाध्वाश्रमवाससौख्य:।।३।।

वैराग्य के कारण किशोरावस्था में उन्होंने अपना घर छोड़ दिया और शिव की भक्ति प्राप्त करके सब कुछ छोड़-छाड़ कर, बिहारघाट नामक स्थान पर आए और श्रीविष्णु आश्रम जी महाराज नाम के साधु के आश्रम में निवास कर के सुख प्राप्त किया।

तर्कादिशास्त्रं पठितं च विष्णो-
श्शब्दादिशास्त्रं हृदि सन्निधाय
वेदं विचार्योव्वटवाचमेवं
श्रीकैय्यटोक्तिं ह्यपि माम्मटं च।।४।।

इन्होंने श्री विष्णु आश्रम जी महाराज से तर्क आदि शास्त्र पढ़े, और व्याकरण आदि शास्त्रों को हृदय में धारण करके, वेदों का विचार करके, भाष्यकार उव्वट का भाष्य पढ़कर और कैय्यट की वाणी का विचार करके, मम्मट के ग्रन्थ का भी अनुशीलन किया।

तत्रैव वा जीवनदत्तसाध्वा-
श्रिते नरौरानगरस्थलेऽहो
श्रीवृद्धिकेशीति शिवालये य-
स्संस्नाप्य शम्भुं, तप आचरेच्च।।५।।

वहीं पर श्रीजीवनदत्त-ब्रह्मचारी जी नामक साधु द्वारा शोभित नरौरा नगर में, एक नरवर नाम का स्थल है, वहां वृद्धिकेशी शिव-

मन्दिर है, वहाँ पर ये श्री श्यामबाबा जी, भगवान् शिव को नहला कर, स्वयं तपस्या करते हैं।

बिहारघट्टादिह नर्वराख्या
स्थली न दूरा विबुधैर्भृता सा
लघ्वीयमुक्ता पुरुषैश्च काशी
सर्वो वसेन्नागपदप्रभाषी[1]।।६।।

यह नरवर नामक स्थान, जो कि विद्वानों द्वारा शोभायमान है, यह बिहारघाट से अधिक दूर नहीं है, और लोग इसे छोटीकाशी भी कहते हैं। यहां पर रहने वाले सभी विद्वान्, नागेशभट्ट और पतञ्जलि से सम्बन्धित शास्त्र (व्याकरण) का व्याख्यान करने वाले हैं।

श्रीश्यामबाबायुवता व्यतीता
चात्रैव वार्धक्यमहो विभाति
हिमांशुगौडं परिपाठ्य बाबा-
गुरुर्मदीयो लभतां प्रतोषम्।।७।।

उन श्री श्याम बाबा का युवत्त्व-काल यहीं व्यतीत हुआ और यहीं इनका बुढ़ापा शोभित हो रहा है। हिमांशुगौड को पढ़ाकर ये बाबागुरुजी सन्तुष्ट होवें।

---

[1] नागसम्बद्धं (पतञ्जलिसम्बद्धं) यत् पदशास्त्रं तत् प्रभाषितुं तच्छीलः। पुनश्चावृत्त्या नागशब्देन नागेशभट्टोऽपि ग्राह्यः। अत्र सर्वोऽपि जनो नागपदप्रभाषी वसेदित्यर्थः।

शास्त्रीति कक्षासमये यदाऽसौ
शब्दार्थसिद्धान्तमवोचयच्च
अध्यापयन् विप्रबटून्नवीनान्
दृष्ट्वा निशम्यापि सुपाठ्यशैलीम्।।८।।

जब ये श्री श्याम-बाबाजी शास्त्री की कक्षा में थे और शब्द-अर्थ के सिद्धान्त को नई आयु वाले बटुकों को पढ़ा रहे थे, तब इनकी पढ़ाने की शैली को देखकर और व्याख्यान को सुनकर।

विष्ण्वाश्रमोऽहो मुदितोऽभवच्च
समुक्तवान् पार्श्वगतेषु चैवं
नूनं हि पीठस्थविवक्तृरूपश्-
श्यामाख्यविप्रो भविता यशस्वी।।९।।

वे श्री विष्णु आश्रम जी महाराज अत्यन्त प्रसन्न हुए और अपने पास बैठे हुए लोगों से कहा - यह श्याम नाम का जो ब्राह्मण है, वह निश्चित ही पीठस्थ होकर (तख्त पर बैठ कर) शास्त्रों के वक्ता के रूप में यशस्वी होगा।

विनिस्सृता विष्णुमुखादकस्मात्
तदा श्रुता शारदया सुवाक्सा
नूनं सतामर्थ इवानुसारी
भवेत्सुवाचामिति चाद्य सिद्धः।।१०।।

और उस समय श्री विष्णु आश्रम जी महाराज के मुख से अचानक निकली हुई वह वाणी मानो साक्षात् सरस्वती ने ही सुन ली,

क्योंकि साधुओं की वाणी का अर्थ ही अनुसरण करता है – यह बात आज सिद्ध हो गई।

न सोऽस्ति विद्वानथ यो गुरूणां
वाचां समर्थत्त्वमहो विहाय
चरेत्पदं वापि शिवप्रवाचाम्-
अर्थानवैतीह गुरुप्रमोदः।।११।।

ऐसा कोई विद्वान् नहीं है, जो गुरुओं की वाणियों की शक्ति के बिना एक पद भी चल पाए, या एक शब्द भी बोल पाए और ये जो (वर्तमान) कवि है, ये कल्याण-पूर्ण वाणियों के अर्थों को जानता है (या फिर शिव-शास्त्रगम्य वाणी के अर्थ को जानने वाला है) और गुरु के लिए आनन्द देने वाला है।

तस्मादधीत्यैव कवित्त्वकाङ्क्षि-
शतीं विधातुं मम चैष यत्नः
मनुस्मृतौ तद्धि समुक्तमद्धा
श्रद्धा फलेद्या गुरुषु प्रवृद्धा।।१२।।

और उन्हीं बाबागुरुजी से पढ़कर, कवित्त्व की आकाङ्क्षा रखने वाले इस शतक का विधान (रचना) करने का, मेरा यह प्रयास है, क्योंकि मनुस्मृति में भी कहा गया है कि गुरुओं में बढ़ी हुई श्रद्धा, निश्चित रूप से फलवती होती है।

अभिनन्दनरूपकमेव जनै-

खबोध्यमिदं शतकं रचितं
न समग्रतया गुरुगौरवगं
शिवदत्तधियैव मयाऽऽचरितम्।।१३।।

अरे लोगों, यह शतक जो मैंने लिखा है, इसे आप अभिनन्दन का रूपक ही जानों, और यह शतक समग्र रूप से गुरु का गौरव प्राप्त नहीं करता है। भगवान् शिव के द्वारा दी हुई बुद्धि के द्वारा ही मैंने यह (लेखनरूप) आचरण किया है।

क्व गुरोर्गुणता क्व जनोऽल्पमतिः
प्रतनोति तथापि मनस्युदितं
दशवर्षनिवासनिदृष्टमुत
परिजीवितमेव लिखामि समम्।।१४।।

कहां तो गुरु की गुणवत्ता, और कहां यह अल्पमति मनुष्य, फिर भी अपने मन में उदित हुए भावों को, और जो दस साल तक निवास के द्वारा यहां मैंने जो देखा या जिया, उसको ही यहां लिख रहा हूं।

महिमानमहो विदुषोऽपि शिवा-
ऽऽश्रयजीवितरागविहीनविदः
परिवेत्ति क एव परो विफलः
प्रतनोमि तथापि मतिं कथने।।१५।।

जो शिव की शरण में ही जीवित हैं और मोह-रागादि से विहीन हैं, ऐसे विद्वान् की महिमा को कौन जान सकता है? (जानने के प्रयत्न में) विफल ही होगा! फिर भी मैं इस काव्यरूपी कथन में अपनी बुद्धि का विस्तार कर रहा हूं।

अधिकं बत सत्यमिहोल्लिखितं
ह्यतिशेत इतीह न तर्कयत
अभिधासृतवर्णनभावपरं
कथनं पठनीमननीकुरुत।।१६।।

मैंने यहां अधिकतर सत्य ही लिखा है। कवि इस काव्य में अतिशयोक्ति कर रहा है - इस तरह की शङ्का मत करो। यह सारा काव्य प्रायः अभिधा द्वारा अनुसृत वर्णन के भावों वाला है, इसको पढ़ो और मनन करो।

मनोरमा प्रिया[2] यस्य क्रिया चैव मनोरमा।
मनोरमाय काव्याय मनोरन्त्रे नमो नमः।।१७।।

(नैष्ठिक-ब्रह्मचर्य-व्रत धारण करने के कारण या सांसारिक–विराग के कारण) मनोरमा अर्थात् स्त्री जिनकी अप्रिय है (दूसरे अर्थ में) मनोरमा नामक ग्रन्थ जिनका प्रिय है, जिनकी क्रिया भी मनोरम है, उस मनोरम काव्य के लिए, और अपने (शुभतायुक्त) मन में रमण करने वाले के लिए बार-बार नमस्कार है।

---

[2] मनोरमा अप्रिया यस्य इति, मनोरमा (मनोरमाख्यग्रन्थः) प्रिया यस्य इति द्विधाऽपि कर्तुं शक्यते,तेनैवार्थसिद्धिः।

चलनं यस्य सिद्धान्तो हसनं यस्य शेखरः।
चिन्तनानाञ्च मञ्जूषा मस्तिष्के तर्कसङ्ग्रहः।।१८।।

सदा चलते रहो - यही जिनका हमेशा सिद्धान्त है। हँसते रहो (प्रसन्न रहो) - यही जिनका हमेशा शेखर अर्थात् मूर्धन्य अर्थ है। जो खुद एक चिन्तनों की मञ्जूषा (अर्थात् पेटिका के समान) हैं और जिनके मस्तिष्क में अनेक प्रकार के तर्कों का सङ्ग्रह है।

(दूसरे अर्थ में) जो चलते-चलते ही सिद्धान्तकौमुदी नामक ग्रन्थ पढ़ा देते हैं, जो हँसते-हँसते ही (अर्थात् आनन्दपूर्वक) शेखर नामक ग्रन्थ पढ़ा देते हैं, जिनके चिन्तनों में हमेशा मञ्जूषा नामक ग्रन्थ के भाव स्थित रहते हैं और मस्तिष्क में तर्कसङ्ग्रह नामक ग्रन्थ विद्यमान है। (वे श्रीबाबागुरुजी हैं।)

वेदान्तो यस्य वाक्येषु साङ्ख्यं सम्यग्विविच्यते।
कण्ठे मुक्तावली यस्य तं वन्दे श्यामसुन्दरम्।।१९।।

जिनके बोले हुए वाक्यों में वेदान्त की झलक मिलती है, जो साङ्ख्य का अच्छी तरह विवेचन करते हैं, मुक्तावली नामक ग्रन्थ जिनके बिल्कुल कण्ठस्थ है, मैं उन श्रीश्यामसुन्दर नामक गुरुजी को नमन करता हूं। (दूसरे अर्थों में यह श्लोक भगवान् श्रीकृष्णपरक भी है।)

शैल्यां चैव महाभाष्यं विद्वत्ता यस्य भूषणम्।

धीमतामेकपूज्यो यस्तं वन्दे श्रीमहामणिम्।।२०।।

महाभाष्य जिनकी शैली में ही शामिल है[3], विद्वत्ता ही जिनका आभूषण है, बुद्धिमान् लोगों के जो एकमात्र पूज्य हैं, उन महान् मणि-स्वरूप गुरुदेव की मैं बन्दना करता हूं।

नैव वित्तं प्रियं नैव कीर्तिः प्रिया
कामिनी न प्रिया नैव किञ्चित्प्रियम्
केवलं सर्वकल्याणकामी द्विजो
गोप्रियश्शम्भुरक्तश्च विप्रप्रियः।।२१।।

धन, कीर्ति, कामिनी - जिनको बिल्कुल प्रिय नहीं है। जिनको कुछ भी सांसारिक वस्तु प्रिय नहीं है। जो सिर्फ सबका कल्याण चाहते हैं। जो गायों को प्रेम करते हैं और भगवान् शिव में ही भक्ति धारण करते हैं और ब्राह्मणों के प्रिय हैं, ऐसे श्रीबाबागुरुजी (वन्दनीय) हैं।

शास्त्रचिन्तारतः काव्यकल्पारतो
नव्यवार्तारतश्चैव पूजारतः
धर्मशिक्षारतो दिव्यशैलीयुतो
मङ्गलानां दिनानीव बाबागुरुः।।२२।।

ये हमेशा ही शास्त्र का चिन्तन करने में लगे रहते हैं, अनेक काव्यों की कल्पनाएं करते हैं, नए-नए प्रकार की (शास्त्रगत) बातें करते

[3] उपर्युक्त श्लोकों में कहें गए सभी ग्रन्थ शास्त्रीय एवं क्लिष्ट-शैली वाले हैं। साधारण मनुष्य की बात तो छोड़ो, प्रायः विद्वान् भी इन ग्रन्थों को सारल्य से नही जान सकते, लेकिन गुरुजी इन सभी को बड़ी आसानी से पढ़ा देते हैं - यही कवि का अभिप्राय है।

हैं, अधिकतर पूजा में ही लगे रहते हैं, धर्म की शिक्षा देने में सावधान हैं, इनकी शैली बड़ी दिव्य है, बाबागुरूजी को ऐसे ही मानो, जैसे साक्षात् मङ्गल (उत्सव) के दिन आ गए हों।

चित्तमस्यास्ति भोज्ये न वस्त्रे स्वके
लौकिके नो पदार्थेऽपि काचिद्रतिः
केवलं शास्त्रचर्चासु शम्भौ तथा
जीवनं पुष्पितं मोदितं शोभितम्।।२३।।

भोजन में, अपने वस्त्रों में या किसी भी पदार्थ में इनका कोई मन (ध्यान) नहीं है, ना कोई लगाव है। सिर्फ शास्त्रों की चर्चाओं में और भगवान् शिव में ही इन्होंने अपना जीवन एक फूल की तरह सुगन्धित और आनन्दित व शोभित किया है।

रक्तपुष्पैश्च धत्तूरपुष्पैरपि
बिल्वपत्रैश्च दूर्वादिभिश्शङ्करः
सेव्यते सिच्यते गाङ्गनीरेण[4] वै
भक्तिभावेन सद्धर्मतथ्यानुगैः[5]।।२४।।

ये भक्तिभावपूर्वक, श्रेष्ठ-सनातन-धर्म के तथ्यों का अनुसरण करते हुए, लाल फूलों से, धतूर के फूलों से, बिल्वपत्रों से और दूर्वा आदि

---

[4] गङ्गाया इदं गाङ्गं, गाङ्गञ्च तन्नीरं, तेन।

[5] सद्धर्मतथ्यानुगैरेतैश्श्रीबाबागुरुभिर्धत्तूरादिभिश्शङ्करस्सेव्यते।

से भगवान् शिव की हमेशा ही सेवा करते हैं, और गङ्गाजल से उनका अभिषेक करते हैं।

तस्य वाक्यस्य शैली पदक्षेपणं
भावसम्भावनं शास्त्रसङ्गाहनम्
वीक्ष्य चाश्चर्यनेत्रैर्द्विजैर्जीवनं
धन्यमर्थप्रदं भूरिशो नन्द्यते।।२५।।

उनके वाक्यों की शैली, शब्दों का क्षेपण (शब्दप्रयोग-प्रकार), भावों का सम्यग् उद्भावन(भावाख्यान), मानों, शास्त्रों से स्नान कराने जैसा है। इसको देख कर (ब्राह्मण) लोग बड़ा ही आश्चर्य मानते हैं और श्री बाबागुरुजी के जीवन को धन्य, अर्थप्रद मानकर बहुत आनन्दित होते हैं।

भाष्यभावाब्धिमग्नश्च हर्षप्रद-
श्शास्त्रिणां भूषणो नव्यतत्त्वं वदेत्
शब्दसिद्धान्तवेतृप्रियस्सद्गुरुस्-
सर्वनम्यस्तपस्वी स बाबागुरुः।।२६।।

ये श्रीबाबागुरुजी, भाष्य के भावों के समुद्र में मग्न हैं, (शास्त्र व्याख्यान द्वारा) हर्ष प्रदान करने वाले और शास्त्रियों के आभूषण हैं, (धर्मादि के) नए तत्त्व को बताते हैं। जो लोग शब्द-सिद्धान्त को जानने वाले हैं, ऐसे लोग बाबागुरुजी से बहुत प्रेम मानते हैं और इस प्रकार सभी के द्वारा प्रणम्य वे तपस्वी श्रीबाबागुरुजी हैं।

नाभिमानं न वा गौरवं दर्शयेत्

जीवनं चैव सारल्ययुक्तं वहेत्
यादृशं भावितं तादृशं कथ्यते
नैव कुत्सा दुराशास्ति चित्ते क्वचित्।।२७।।

ये कभी भी अभिमान या अपना बड़प्पन नहीं दिखाते। अपने जीवन को सदा ही सरलता से धारण करते हैं।[6] जिस तरह का मन में भाव है, वैसा ही कह देते हैं। कोई भी मन में बुरा भाव या (दुराशा) बुरा करने की इच्छा नहीं रहती।

यस्सुधीनाम्प्रियो यः कवीनाम्प्रियो
यो धनीनां प्रियो यो यतीनां प्रियो
यो द्विजानां प्रियश्शङ्करस्य प्रियो
यस्समेषां प्रियो भाति बाबागुरुः।।२८।।

वे विद्वानों के भी प्रिय हैं, कवियों के भी प्रिय हैं, धनवान् लोगों के भी प्रिय हैं, सन्यासियों के भी प्रिय हैं, ब्राह्मणों के भी प्रिय हैं, भगवान् शङ्कर के भी प्रिय हैं और सभी के प्रिय हैं ऐसे श्रीबाबागुरुजी शोभित हो रहे हैं।

यश्च वृद्धत्त्वकालेऽपि यूनामिव
हर्षभृच्छक्तिभृच्छास्त्रहर्षी द्विजः
श्रीमतां धीमतां स प्रणम्यश्शिवे
भक्तिमान् जाह्नवीतीरवासाश्रमः।।२९।।

[6] या फिर - जीवन की धारा को सरलता से बहाते हैं।

जो बुढ़ापे में भी जवानों की तरह हर्ष से भरे हुए हैं और शक्तिशाली हैं। शास्त्रों का आनन्द प्रदान करने वाले हैं। ब्राह्मण, श्रीमान् और बुद्धिमान लोगों द्वारा सदा ही नमस्कार करने के योग्य भगवान् शिव में भक्ति को धारण करने वाले और गंगा जी के किनारे निवासरूपी आश्रम वाले श्रीबाबागुरुजी हैं।

वैराग्यशास्त्रलसितोऽपि जनः कदाचित्
साहित्यपाठनविधौ रमते रसेषु
शृङ्गारहास्यकरुणादिषु दक्षताभिः
छात्रस्य हृद्यगुरुतां प्रियतां प्रयाति।।३०।।

वे यद्यपि वैराग्य शास्त्र (अर्थात वेदान्त, साङ्ख्य, ब्रह्मसूत्र, पञ्चदशी, इत्यादि वैराग्य प्रदान करने वाले शास्त्र) से विभूषित हैं, फिर भी कभी-कभी जब वह साहित्य पढ़ाने में आनन्दित होते हैं तो अनेक रसों में शृङ्गार, हास्य, करुण आदि रसों में (खूब डूब जाते हैं और अध्यापन रूपी) दक्षताओं के द्वारा छात्रों की हार्दिक गुरुत्त्व की पदवी को और प्रेम को प्राप्त करते हैं।

श्रीणां स्वभाव उत मङ्गलता कदाचित्
सा संश्रयेत् सुचरितेषु शुभेषु नूनम्
अध्यात्मचारिपुरुषेषु सुलभ्यतत्त्वं

शास्त्रैः[7] कृतं परिलभन्त इदं मनुष्याः।।३१।।

और यह श्री का स्वभाव ही है (या कभी, मङ्गल स्वरूप है) कि वह सन्तों द्वारा आचरण किए हुए शुभ-कार्यों में श्रयण (निवास) करती है और अध्यात्म का आचरण करने वाले पुरुषों में भी यह एक सुलभ्य तत्त्व है, जो कि शास्त्रों द्वारा निर्मित है और मनुष्य इसे शास्त्रों द्वारा ही प्राप्त करते हैं।

यस्य कर्माणि वाचां प्रवाहं जनाः
वीक्ष्य हर्षं च धर्मश्रिया शोभिताः
जीवनं पुष्पितं सौरभैर्भृद्वपुः
पुण्यमाशुर्व्रजन्तश्श्रयन्ते सुखम्।।३२।।

जिनके (धार्मिक-मार्ग पर आचरण किए जाते हुए) कर्मों को देखकर और (पुण्य-समन्वित) वाणियों के प्रवाह को देखकर लोग हर्षित होते हैं तथा धर्म रूपी लक्ष्मी से शोभित होते हैं। उससे उनका जीवन पुष्प की तरह हो जाता है और उनका तन-मन सुगन्धि से भर जाता है, वे लोग तत्काल पुण्य को प्राप्त करते हुए सुखी हो जाते हैं।

यत्र धर्मस्य शीलस्य सम्पालनं
यत्र शास्त्रस्य हर्षश्च संलभ्यते

---

[7] शास्त्रैरिति पदस्य द्विधा विनियोगः – शास्त्रैश्श्रितं तथ्यम्। पुनश्च शास्त्रैरेव शास्त्राचरणैरेव शास्त्रश्रितं तथ्यमिदं मनुष्याः लभन्ते। एतद्धिन्दीभाषायां स्पष्टत्त्वेन बुध्यताम्।

वेदपाठैर्मरुच्च श्रवौ प्राणिनां
धन्यतां शुद्धतां मङ्गलत्त्वं गताः।।३३।।

जहां धर्म का और शील (नम्रता,चरित्र) का सम्यक् रूप से पालन होता है और शास्त्रों का आनंद प्राप्त होता है और वेदपाठों के द्वारा जहां की हवा और प्राणियों के कान धन्य, शुद्ध और मंगल को प्राप्त करते हैं, ऐसे श्रीबाबागुरुजी हैं अर्थात् (बाबा गुरु जी का आश्रम इस प्रकार का है)।

आगतो विप्रमान्यो द्विजैरुच्यते
शब्दवृष्टिश्च[8] शब्दप्रियैरुच्यते
साङ्ख्यवेदान्ततर्कादिविद्याशुभो
बोद्धृसन्यासिभिर्वन्द्यते श्रद्धया।।३४।।

अरे, ये विप्रों के पूज्य आ गए हैं - ऐसा द्विज कहते हैं। ये मानों शब्दशास्त्र की बारिश की तरह हैं - ऐसा शब्दप्रिय लोग कहते हैं। ये साङ्ख्य, वेदान्त, तर्क आदि विद्याओं से (युक्त होने से) बहुत ही शुभता-सम्पन्न हैं - ऐसा विद्वान् सन्त, संन्यासी लोग श्रद्धा से कहते हुए इनकी वन्दना करते हैं।

काष्ठनिर्भेदनैः पुष्पसंसेचनै-
र्वृक्षसंरोपणैर्नव्यकार्याश्रयैः

---

[8] शब्दस्य शब्दशास्त्रस्य वृष्टिरिव यः। शब्दप्रियैश्शब्दशास्त्रप्रियैरित्यर्थः।

पुस्तकालोकनैः काव्यसङ्गुम्फनैस्-
तद्दिनानि व्यतीतानि मोदैस्सदा।।३५।।

कभी-कभी लकड़ियां काटते हुए, कभी फूलों की बगिया सींचते हुए, कभी वृक्षारोपण करते हुए, कभी नए-नए कार्यों का आश्रय लेने से, कभी ग्रन्थों का ही अवलोकन करने से, कभी काव्य-गुम्फन करने से, उनके दिन सदैव आनन्दपूर्वक व्यतीत होते हैं।

पाकशालाविधौ धेनुशालाविधौ
पाठशालाविधौ देवशालाविधौ
पुष्पशालाविधौ कार्यशालाविधौ
दर्शितैस्स्वीयदाक्ष्यैर्गतस्सोऽर्च्यताम्।।३६।।

उन्होंने न सिर्फ पाठशाला में, अपितु रसोई संबंधी विधि में, गौशाला (सम्बन्धी कार्यों की) विधि में, मन्दिर (सम्बन्धी कार्यों की) विधि में, पुष्पशाला सम्बन्धी विधियों में और कार्यशाला की विधियों में अपनी दक्षता को दिखाया है, इसलिए वे लोगों द्वारा सम्मानित हैं।

नैव रक्ताम्बरो नैव पीताम्बरो
नैव चाशाम्बरो नैव नीलाम्बरो
ब्राह्मणानां यदुक्तं महन्मङ्गलं
शोभते श्रीगुरुश्चात्र शुक्लाम्बरः।।३७।।

ये न तो लाल कपड़े पहनते हैं, न पीले कपड़े, न ही दिगम्बर रहते हैं और नीले कपड़े तो पहनते ही नहीं हैं (ब्राह्मण के लिए नीले वस्त्र पहनना शास्त्रनिषिद्ध है।)। ब्राह्मणों का जो महान् मङ्गल-स्वरूप बताया गया है, केवल ऐसे श्वेत-वस्त्र ही श्रीगुरुजी पहनते हैं।

नोर्ध्ववस्त्रं शरीरे ह्यधोवस्त्रकं
धारयेन्नैव चाङ्ग्लीयवस्त्रं क्वचित्
केवलं शास्त्रमर्यादयाऽऽमोदितं
सभ्यवस्त्रं सुशुक्लं विरक्तप्रधीः।।३८।।

ये विरक्त बुद्धि वाले बाबाजी, ना तो अपने शरीर पर ऊर्ध्ववस्त्र (ऊपर से पहना जाने वाला) पहनते हैं ना ही अधोवस्त्र (नीचे से पहना जाने वाला) पहनते हैं और अङ्ग्रेजी पद्धति वाले वस्त्रों की तो बात ही छोड़ो, सिर्फ शास्त्रों की मर्यादा के द्वारा ही जो आमोदित (समर्थित) हैं, इस तरह के सभ्य सफेद वस्त्र ही, पहनते हैं।

नैव गङ्गावगाहो न शम्भ्वर्चनं
त्यज्यते शास्त्रचर्या बुधेन क्वचित्
शब्दसम्पाठनं धर्मविख्यापनं
मण्डनं श्रीवरस्य श्रियै स्यान्नृणाम्।।३९।।

गङ्गाजी में नहाना, भगवान् शिव की पूजा करना और शास्त्रों का आचरण करना- ये तीन काम श्रीबाबागुरुजी द्वारा कभी नहीं त्यागे गए। व्याकरणशास्त्र पढ़ाना और धर्म का प्रचार करना यही इनका शृङ्गार है। ऐसे श्रीवर (शोभायमान पुरुष) का यह शृङ्गार, लोगों के लिए शुभदायक हो (ऐसी हम कामना करते हैं)।

यस्य शिष्यास्सदैवोच्चतां सङ्गताः
शब्दशास्त्रप्रसादाज्जनैरर्चिताः
सोऽत्र वैराग्यभाग्विष्णुशास्त्रप्रमुद्
गाङ्गतीरे विभाति द्विजैरावृतः।।४०।।

व्याकरण-शास्त्र के प्रसाद से जिनके शिष्य सदा ही उच्च पदवी को प्राप्त हुए और लोगों द्वारा पूजित हुए, वे इस (नरवरस्थ) गङ्गाजी के तट पर ब्राह्मणों से घिरे हुए, विष्णु-शास्त्र-आनंदी (श्रीविष्णु-आश्रमजी-महाराज-प्रदत्त-शास्त्रमोदी या भागवतप्रेमी, उभयार्थक) और वैराग्य धारण करने वाले श्रीबाबागुरुजी शोभित हो रहे हैं।

यो निजस्वैस्सदा[9] निर्धनान् पाठयन्
धर्मदृष्ट्या परेषां हिते संरतः
शास्त्रकल्याणसारी प्रधीः प्रत्यहं
स्वार्थहीनश्श्रमी क्वेदृशो दृश्यते।।४१।।

---

[9] निजस्वैः निजधनैरित्यर्थः।(सर्वकारीयाध्यापकवृत्ति-प्राप्तैस्स्वकीयैर्धनैरित्यर्थः।)

जो प्रतिदिन अपने धन से, निर्धनों को विद्या-दान करते हुए, धर्म की दृष्टि से परोपकार एवं दूसरों का हित करने में लगे हुए हैं और शास्त्र के द्वारा कहे हुए कल्याण का अनुसरण करने वाले बुद्धिमान हैं, ऐसे स्वार्थहीन और दूसरों के हित के लिए परिश्रम करने वाले आजकल कहां दिखाई देते हैं?

मस्तके जाह्नवीमृच्च पापापहा
यस्य कण्ठे च रुद्राक्षमाला, करे
पुष्पबिल्वादिभृत्पेटिका गाङ्गकं
शोभतेऽर्चां विधातुं व्रजेच्चेद् यदा।।४२।।

जब ये गुरुजी (वृद्धिकेशी शिव मंदिर में) पूजा करने के लिए जाते हैं, उस समय इनके मस्तक पर गङ्गाजी की मिट्टी लगी होती है (जो पापों का नाश करने वाली है) और इनके गले में रुद्राक्ष की माला पड़ी रहती है और हाथ में फूल, बिल्वपत्र आदि से भरी हुई टोकरी और गङ्गाजल से भरा हुआ कमण्डल रहता है।

वैदिकानां गुरुश्शाब्दिकानां गुरुस्-
तार्किकाणां गुरुस्साङ्ख्यवित्सद्गुरुर्-
ज्योतिषीनां गुरुर्याज्ञिकानां गुरुस्-
सर्वमध्यापयेद्यस्स बाबागुरुः।।४३।।

वे श्रीबाबागुरुजी, वैदिकों के गुरु, शाब्दिकों के गुरु, तार्किकों के गुरु, साङ्ख्यशास्त्र को जानने वाले लोगों के सद्‌गुरु, ज्योतिषियों के गुरु और याज्ञिकों के भी गुरु हैं, जो सबको पाठ पढ़ाते हैं।

संविलोक्यैव शिष्यं विजानात्यपि
तद्वचस्तद्गतीस्तस्य चेष्टादिकान्
कीदृशोऽयं भविष्योऽशुभो वा शुभः[10],
चेदृशी दूरदृष्टिश्च बाबागुरोः।।४४।।

ये (आश्रम में आए हुए) शिष्य की वाणी, उसकी गतियां, उसकी चेष्टाएं आदि देखते ही, उसको समझ जाते हैं (पहचान लेते हैं)।

इसका कैसा भविष्य है, शुभ या अशुभ? ये बात भी तुरन्त वे जान लेते हैं। इस तरह की श्रीबाबागुरुजी की दूरदृष्टि है।

यस्य वाक्यानि चाकर्ण्य सर्वे द्विजाः
चेद्विचार्यापि संलोकयन्त्यग्रिमे[11]
सत्फलान्यर्थपूर्णानि तान्यस्य वै
सत्यतां यान्ति सर्वे महाविस्मिताः।।४५।।

जिनके वाक्यों को सुनकर और विचार करके, अगर लोग देखते हैं, तो आगामी समय में, वे सभी वाक्य, सत्फलयुक्त, अर्थपूर्ण एवं

---

[10] शुभमस्यास्तीति शुभः।शुभशीलः (भविष्येति पदस्य विशेषणम्)। अर्शाद्यच्। शिष्यस्य शुभो भविष्योऽशुभो वेत्यादिकं तद्गत्यादिकमवलोक्यैव श्रीगुरुर्जानातीत्यर्थः।

[11] अग्रिमे (आगामिनि) काले इत्यर्थः।

सत्य ही होते हैं - इस तरह के इन गुरुजी की वाणी की सफलता को देखकर, लोग बहुत विस्मित हो जाते हैं।

यो जनेभ्यो न गृह्णाति किञ्चिद्धनं
नान्नमेवं जलं नो[12] फलं नो पयः
यत्परिग्राहिणां पुण्यता नश्यति
तथ्यमेतद्विचार्यैव संवर्तते।।४६।।

परिग्रह लेने वालों का पुण्य नष्ट होता है - इस तथ्य का विचार करके श्रीबाबागुरुजी (अधिक श्रद्धालुओं को छोड़कर) किसी भी मनुष्य से, जरा भी पैसा, अनाज, जल, फल, दूध इत्यादि (स्वयं के लिए) नहीं ग्रहण करते।

मानुषा यत्र धूर्ताश्च तेऽहर्निशं
वञ्चने तत्पराश्श्रद्धया पूरितान्
तत्र चाऽयं प्रसङ्गं सदा वर्जयेत्
चेद् धनी दातुमिच्छेत् परीक्ष्यैव तम्[13]।।४७।।

---

[12] निषेधार्थकः।

[13] यत्र च संसारे धूर्तजनाः(सन्यासिवेशमाधृत्य) अहर्निशं वणिजां वञ्चने संरताः सन्ति, तत्र एष श्रीमद्बाबागुरुः धनिना दानप्रसङ्गे उत्थापिते सत्यपि तं परिवर्जयति, एवञ्च तं धनिनं परीक्ष्यैव (अयं अन्यायेन तु वित्तं न उपार्जयतीत्यादिविषयकं) दानं आश्रमवासिभ्यश्छात्रेभ्य एव स्वीकरोति, स्वयं तु लेशमात्रमपि तदुपयोगं न करोतीत्यर्थः। (अध्यापनप्राप्तवित्तजीवितजीविकात्त्वात्)

आजकल जहां धूर्त लोग, रात-दिन (धार्मिकता की आड़ में) दूसरे श्रद्धालु लोगों को ठगने में लगे हुए हैं वहां ये गुरुजी, दान एवं परिग्रह का प्रसंग ही वर्जित कर देते हैं और अगर धनवान् व्यक्ति ज्यादा ही देने की इच्छा करता है, तो उसकी (धार्मिकता, पात्रता आदि दृष्टि से) परीक्षा करके ही आश्रम के लिए (दानादि) स्वीकार कर लेते हैं।

लेशमात्रा स्पृहा लौकिकेष्वस्य च
नैव वित्तादिषु श्रीशिवे सत्पथे
शाश्वतं सत्यमेतेन लब्धं यतः
पद्मपत्रस्थितिः के[14] तथायं वसेत्।।४८।।

लौकिक (धनादि) पदार्थों में इनकी जरा भी स्पृहा नहीं है, केवल शोभापन्न कल्याणमय सत्पथ में ही इनकी स्पृहा है, क्योंकि इन्होंने शाश्वत सत्य को जान लिया है, इसलिए ये संसार में ऐसे ही रहते हैं, जैसे जल में कमल का पत्ता (निर्लेप) रहता है।

शैवलोकादसौ शम्भुना प्रेषितो
भूतले च द्विजाज्ञाननाशाय वै
धर्ममार्गप्रशस्त्यै विपश्चित्सभा-
मण्डनायापि तेजस्विवाक् शास्त्रिणाम्।।४९।।

---

[14] के – जले यथा पद्मपत्रस्य स्थितिर्भवति तथा अयं (श्रीगुरुः) संसारे वसेत् (निवासं करोतीत्यर्थः)।

(ऐसा मालूम पड़ता है) जैसे भगवान् शिव ने ही, शिवलोक से ब्राह्मणों के अज्ञान को नष्ट करने के लिए और धर्ममार्ग की प्रशस्ति के लिए तथा विद्वानों की सभा को शोभित करने के लिए इन, शास्त्रियों में तेजस्वी वाणी वाले, श्रीबाबागुरुजी को धरती पर भेजा है।

दूरदेशागताः शब्दशास्त्रार्थिनः
प्राप्य यस्य प्रसादाद्भवन्ति ध्रुवम्
अल्पकाले हि शास्त्रप्रवीणाश्च ये
ते गुरोश्च प्रशंसापराश्शोभिताः।।५०।।

दूर प्रदेशों से आए हुए व्याकरणशास्त्र के इच्छुक, ज्ञान प्राप्त करके जिनके प्रसाद से, थोड़े ही समय में शास्त्र में प्रवीण हो जाते हैं, वे इन गुरुजी के गुणों की प्रशंसा करते हुए शोभायमान होते हैं।

पाठनस्यास्य सूक्ष्मो विधिर्लोक्यतां
शब्दसङ्गुम्फनैर्वा जरीहृष्यताम्
अल्पकाले बहुज्ञानदायिप्रथां
पद्धतिं बोधदां वीक्ष्य मोमुद्यताम्।।५१।।

इनके पढ़ाने की सूक्ष्म-विधि को देखो, (या काव्य बनाते समय) जब ये शब्दों का गुम्फन (गूंथना) करते हैं, उससे भूयः हर्षित होओ! थोड़े ही समय में बहुत ज्ञान दे देने वाली प्रथा को देखकर, और बोध प्रदान करने वाली पद्धति को देखकर खूब आनन्द मनाओ!

सद्य एवास्य शिष्या हि विद्वद्वरास्-
सम्भवन्त्यल्पकाले यतो यो विधिर्-
युज्यते, पूज्यते तेन सर्वैर्द्विजैश्-
शब्दशास्त्रप्रदो भाति बाबागुरुः।।५२।।

थोड़े से ही समय में इनके शिष्य ही विद्वान् बनते हैं, क्योंकि पढ़ाने की जो विधि, ये गुरुजी प्रयोग करते हैं, उसके द्वारा ही द्विज लोग इनका बहुत सम्मान करते हैं। इस तरह व्याकरण-शास्त्र का ज्ञान प्रदान करने वाले श्री बाबा गुरुजी शोभायमान हैं।

यश्च मूढानपि ज्ञानदाने क्षमश्-
चेत्सरेदस्य रीत्यैव नान्यन्मनाः
अश्नुयात्सर्वसौख्यं सदा घोषणां
यः करोति प्रभाभृत्स बाबागुरुः।।५३।।

अगर इनके ही तरीके से चला जाए, अन्य (व्यर्थ की) बातों में मन ना लगाया जा जाए, तो ये मूढों को भी ज्ञान देने में सक्षम हैं, और वह (मूढ) ज्ञानी होकर सभी सुख प्राप्त करता है, ऐसी घोषणा वे तेजस्वी बाबागुरुजी, सदा ही करते हैं।

नाधिकं हर्षमेतीव नो शोकतां,
मोहतां लोभतां क्रोधतां नैव यः

केवलं शैवरूपे बुधो मज्जति
नूनमेवं विबोध्यस्स बाबागुरुः।।५४।।

जो न तो अत्यधिक हर्षित होते हैं, न अत्यधिक दुखी होते हैं, जो न लोभ और क्रोध को धारण करते हैं और केवल कल्याण स्वरूप ब्रह्म में ही निमग्न रहते हैं - वे निश्चित ही बाबागुरुजी हैं, ऐसा जानों।

शिष्यकल्याणकामी भवेत्क्रोधितस्-
तस्य दुःखं प्रणष्टुं व्रजेन्मोहताम्
धर्मलब्ध्यै व्रजेल्लोभतां चैव यस्-
तत्त्रिदोषोऽपि मोक्षाय सङ्कल्पते।।५५।।

जो केवल शिष्य के कल्याण के लिए क्रोधित होते हैं, उसका दुःख मिटाने के लिए मोह को भी प्राप्त करते हैं और धर्म की प्राप्ति के लिए मानों लोभी हैं - इस तरह से क्रोध, मोह और लोभ - ये तीन दोष भी बाबागुरुजी के लिए गुण बनकर, मोक्ष की सङ्कल्पना प्रस्तुत करते हैं।

शम्भुना सुन्दरश्शीतलश्चन्द्रमाः
मस्तके चादरेणैव सन्धार्यते
एवमेषोऽपि बाबा हिमांशुं द्विजं
प्रेमभावैश्च मानैस्समामन्यते।।५६।।

जैसे भगवान् शङ्कर ने सुन्दर और शीतल चन्द्रमा को अपने माथे पर आदरपूर्वक धारण किया, इसी प्रकार ये श्रीबाबागुरुजी भी, हिमांशु नामक द्विज को प्रेमभाव से सम्मानित करते हैं।

नैव गुण्यैर्गतश्चन्द्रमाः मस्तके
तत्कृपा तद्दया हेतुरन्यो न हि
सुन्दरो यस्स्वयं लोककल्याणकृत्
तस्य किं भूषणैर्यस्स्वयं भूषणः[15]।।५७।।

और चन्द्रमा अपने गुणों से भगवान् शिव के मस्तक पर गया हो, ऐसी कोई बात नहीं है। ये तो केवल (भगवान् शिव और बाबागुरुजी) की कृपा और दया ही है, जो उन्होंने चन्द्रमा (हिमांशु) को अपने मस्तक पर धारण कर, उसे सम्मान दिया। जो कल्याणकारी शिव हैं (पक्षान्तर में बाबाजी) वह तो स्वयं सुन्दर है! सत्य ही है - जो स्वयं भूषण हो, उसको आभूषणों का क्या काम?

भस्मरागो विरागो यथा शङ्करस्-
तद्वदेषां च भाले शुभा मृत्तिका
तस्य सर्पो गले मस्तके बाहुषु
श्रीगुरुं सर्प आवृत्य सन्तिष्ठते।।५८।।

[15] भूषणैः शूलिनः किं च बाबागुरोः इति पा.

जैसे भगवान् शङ्कर अपने शरीर पर भस्म लपेटते हैं और वैराग्यवान् हैं, उसी तरह से बाबाजी के भी माथे पर शुभ (गङ्गाजी की) मिट्टी लगी रहती है और ये भी वैराग्यवान् हैं। भगवान् शिव के गले में साँप पड़ा रहता है और (कभी-कभी) पूजा में श्रीगुरुजी को साँप घेर कर बैठ जाता है। (जो जिसकी उपासना करता है उसका स्वरूप भी वैसा ही हो जाता है – इस शास्त्र को ख्यापित करता हुआ, यह कवि का वचन है।)

योऽप्यधीते सदा श्रद्धया श्रीगुरोः
प्रोद्धवेत्तस्य बुद्धौ द्रुतं स्फूर्तता
बिल्वपत्रादिभिश्शङ्करं पूजयेत्
तस्य विद्यागतिं को निरोद्धुं क्षमः।।५९।।

जो भी, श्रीगुरुजी से श्रद्धापूर्वक अध्ययन करता है, उसकी बुद्धि में द्रुतगति से स्फूर्त्ति पैदा होती है, और साथ ही साथ जो बिल्वपत्र आदि से भगवान् शिव की पूजा भी करता रहता है, उसकी विद्या की गति को कौन रोक सकता है?

यस्तिङन्तं सुबन्तं तथा तद्धितं
पाठयन् यः कृदन्तं विना पुस्तकैः
छात्रवर्गेण याति प्रशस्तिं स वै
बुध्यते बोद्धृभिस्सोऽत्र बाबागुरुः।।६०।।

तिङन्त, सुबन्त, तद्धित और कृदन्त को, जो बिना पुस्तक के ही पढ़ाते हुए पूरे छात्रवर्ग की प्रशंसा को प्राप्त हुए, वे यहाँ विद्वानों द्वारा श्री बाबागुरुजी जाने जाते हैं।

शीतो यस्य तिङन्तपाठलसितो ग्रीष्मस्सुबन्तैर्मुदा
वृष्टिस्तद्धितसंयुता भवति वै भाष्यं च वासन्तिकम्
पूर्णे प्रौढमनोरमा पठति वा यस्माद् द्विजानां गणो
विद्वद्भूषण एष एति विबुधश्शास्त्रैस्समं वत्सरम्।।६१।।

पूरे जाड़े, जिनके तिङन्त पढ़ाते हुए शोभित होते हैं, जिनकी गर्मियां आनन्दपूर्वक सुबन्त पढ़ाते हुए व्यतीत होती हैं, पूरा वर्षाकाल तद्धित से युक्त रहता है, वसन्त-ऋतु भाष्य पढ़ाते हुए बीतती है, और पूरे साल छात्रों का समूह, जिनसे प्रौढमनोरमा पढ़ता है, वे विद्वानों के आभूषण श्रीबाबागुरुजी, सम्पूर्ण वर्ष को इसी तरह (शास्त्रों द्वारा) बिताते हैं।

सिद्धान्तश्च मनोरमाऽथ भवताद्भाष्यं च पातञ्जलम्
यद्वा भूषणसार एव विबुधाः! स्याद्वापि मुक्तावली
मञ्जूषा बत तर्कसङ्ग्रह उत व्यासस्य वाऽष्टादशी
सूत्रं ब्रह्मगतं समं हि गुरुणा मोदेन सम्पाठ्यते।।६२।।

अरे विद्वानों! चाहे सिद्धान्तकौमुदी हो, चाहे प्रौढमनोरमा हो, चाहे पतञ्जलि-विरचित महाभाष्य हो, चाहे वैयाकरणभूषणसार हो, चाहे मुक्तावली हो, चाहे मञ्जूषा नामक ग्रंथ हो, या फिर

तर्कसङ्ग्रह हो, या फिर वेदव्यास मुनि द्वारा विरचित अष्टादश पुराण हों, या फिर ब्रह्मसूत्र हो, सब कुछ बड़े ही आनन्द से (और विद्वत्ता से), श्रीगुरुजी पढ़ाते हैं।

पुण्यधामनि यो विप्रो न च बाबामुखात्पठेत्।
अवश्यं स्वर्णपुष्पाणि त्यजतीह स दुर्मतिः।।६३।।

इस पुण्य-धाम नरवर में रहकर जो ब्राह्मण, श्रीबाबागुरुजी के मुख से नहीं पढ़ता, वह दुर्बुद्धि, निश्चित रूप से अनायासलभ्य स्वर्ण-पुष्पों को छोड़ता है (अर्थात् प्राप्त नहीं कर पाता)।

बाबागुरुसमश्शास्त्रेष्वव्याहतगतिर्बुधः।
काश्यां नैव च कुत्रापि सम्पूर्णे न च भारते।।६४।।

श्रीबाबागुरुजी के समान सभी शास्त्रों में अव्याहत-गति वाला विद्वान्, न तो बनारस में ही है, और न ही पूरे भारत में कहीं और कोई विद्वान् है।

पदं न्यायं तथा साङ्ख्यं वेदान्तं च चतुश्श्रुतिम्।
सम्यग्भागवतं चैव पाठयेच्छ्रीगुरुस्त्विह।।६५।।

व्याकरण, न्याय, साङ्ख्य, वेदान्त, चारों वेद और भागवत, सब कुछ अच्छी तरह से श्रीगुरुजी यहां पढ़ाते हैं।

विलोक्यैषां तु सारल्यं जीवनं च तपोयुतम्।
विश्वसन्ति न नव्यास्तु जनाः येऽप्यागता इह।।६६।।

इनकी सरलता और तपस्वी जीवन देखकर जो नए लोग यहां आते हैं, वे यह विश्वास नहीं कर पाते, कि ये इतने महान् विद्वत्तायुक्त गुरुजी हैं।

अहो पश्यन्तु पश्यन्तु गुप्तं चेमं महामणिम्।
के ते छात्रा मुधा यान्ति काशीं, त्यक्त्वा शुभस्थलम्[16]।।६७।।

अरे छात्रों! इन गुप्त महान् मणि की तरह मूल्यवान् बाबाजी को देखो! वे कौन छात्र हैं, जो व्यर्थ ही इन गुरुजी को और इस शुभ-स्थल नरवर को त्याग कर, काशी आदि नगरों में जाते हैं।

सदा रुद्रजपे लग्नो दुर्गापाठे सदा रतः।

---

[16] अहो, अरे सांसारिकाः। एतं श्रीबाबागुरुं गुप्तं महामणिं (वैराग्यकारणाद् बाबागुरूणां कीर्त्यादिवैमुख्यं, तस्मात्तेषां गुप्तत्वं, सदोपकारलग्नत्त्वात् सकलशास्त्रज्ञत्त्वाच्च महामणित्त्वम्) पश्यन्तु (हर्षाश्चर्यभावसमन्वितत्त्वात् पश्यन्तु इति द्विर्वचनम्)। शुभस्थलं नरवरविशेषणत्त्वेनाह। (नह्यत्र काशीगमनप्रतिरोधकत्त्वम् अपितु नरवरवैशिष्ट्यदर्शनाय छात्रेभ्यो नरवरमहत्त्वबोधनाय चैतद्वचनम्) अपि च ये काशीस्थास्तेषाङ्कृते वचनमिदं काशीवैशिष्ट्यपरान्वयसिद्धम्।

गङ्गाभक्तश्च शास्त्राणां वारिधिस्स महागुरुः।।६८।।

वे महागुरुजी, रुद्री और दुर्गासप्तशती का सदा पाठ करते हैं, गङ्गाजी के परम भक्त हैं, और सभी शास्त्रों के समुद्र हैं।

के न यान्ति मदं लोभं प्राप्य विद्यां धनं तथा।
एक एव मया दृष्टो धन्यो बाबागुरुर्महान्।।६९।।

ऐसा कौन है, जो धन और विद्या प्राप्त करके मतवाला और लोभी नहीं हो जाता? तो इसका उत्तर एक ही है, ऐसे जो मैंने देखें हैं, वे धन्यपुरुष श्रीबाबागुरूजी ही हैं।

धर्मस्य यन्महत्तत्त्वं जीवने तद्विलोक्यते।
सङ्गीतं जीव्यवायूनां गुञ्जत्यत्र पदे पदे।।७०।।

धर्म का जो महान् तत्त्व है, वह इनके जीवन में देखा जाता है और जीवन्तता-रूपी हवाओं का सङ्गीत यहां पग-पग पर गूंज रहा है।

अहो धर्मोऽप्यहो शास्त्रं दुष्करं दुर्गमं च यत्।
तेजस्विवाक्यशैलीभिस्सारल्येन प्रबोध्यते।।७१।।

ओहो, बड़ा आश्चर्य है, जो शास्त्र और जो धर्म बड़ा ही दुर्गम और दुष्कर है, उसका भी ये गुरूजी अपनी तेजस्वी-वाक्य-शैली द्वारा, सरलता से ज्ञान करा देते हैं।

यान्तु यत्रापि तत्रापि कुत्रापि मूढमानसाः।
धर्मत्त्वं चैव शास्त्रत्त्वं तीर्थेऽस्मिन्नेव[17] लभ्यते[18]।।७२।।

अरे मूढ़ों! जहां-तहां, कहीं भी जाओ, लेकिन धर्मत्त्व और शास्त्रत्त्व तो (एक विशिष्ट-अनुभूति कराने वाला) नरवर में ही प्राप्त होता है।

धर्मं नैव च वेत्त्येव चरत्यपि द्विजाग्रगः।
विचारयति च ब्रह्म शिवं तस्माच्छिवेचरः।।७३।।

ये केवल धर्म को जानते ही नहीं हैं, अपितु आचरण में भी लाते हैं, और ब्रह्म-स्वरूप शिव को विचारते हैं, इसलिए ये शिवचारी हैं।

दृष्ट्वा यथा दिनकरं कमलानि भान्ति
चन्द्रं विलोक्य कुमुदाश्च मुदा विभान्ति
एवं द्विजाः परिनिशम्य गुरोश्च शास्त्रं,

[17] अस्मिन्नरवराख्ये तीर्थ इत्यर्थः।

[18] नरवरं प्रति जना आकर्षिताः भवेयुश्शास्त्रं धर्मं च लभेरन् इति भावेन वचनमेतदुक्तम्।

दृष्ट्वाऽथ शास्त्रवपुषं परिमोदमग्नाः।।७४।।

जिस तरह से सूर्य को देखकर कमल खिल जाते हैं, चन्द्रमा को देखकर कुमुद आनन्दपूर्वक विकसित होते हैं, उसी तरह से ब्राह्मण,शिष्य लोग, इन गुरूजी का शास्त्र सुनकर और इनके (शास्त्र-समृद्ध) स्वरूप को देखकर आनन्द-मग्न हो जाते हैं।

यद्वा भयङ्करवने पशुपक्षिपूर्णे
नानावितानतरुशष्पभिषग्युते[19] च
हस्त्यादयोऽपि विचरन्ति बलाधिराजास्-
सिंहस्तथापि भवति स्वयमेव सम्राट्।।७५।।

जैसे अनेक लता, वृक्ष, घास, औषधि आदि से भरे हुए, पशु-पक्षी से पूर्ण, भयङ्कर-वन में हाथी इत्यादि बलवान् पशु विचरण करते हैं, किन्तु शेर फिर भी स्वतः सिद्ध सम्राट् होता है।

एवं हि शास्त्रविपिनेऽपि महाबलास्ते
चान्योक्तिखण्डनरता विबुधाश्चरन्ति
दृष्ट्वाऽथ किन्तु वपुषं ह्यपि शास्त्रगर्ज्जं[20]

[19] विताना विस्तृताश्चेमे तरुशष्पभिषजस्तैर्युतस्तस्मिन्। नानावितानतरुशष्पभिषग्भिर्युते युक्ते।

[20] शास्त्राणां गर्ज्जं यस्य तम्। गर्ज्जनमेव गर्ज्जः– भावे घञ्। तं गर्ज्जम्। शास्त्रसम्बन्धिगर्ज्जनायुक्तः। न हि शास्त्रज्ञोऽपि भीरुरिवाचरत्यपितु स शास्त्रसिंह इव गर्ज्जनशील इत्यर्थः।

बाबागुरोस्तु सकलाः मलिनीभवन्ति।।७६।।

ऐसे ही शास्त्रों के जङ्गल में विद्यारूपी बल को धारण करने वाले महाबली विद्वान् लोग विचरण करते हैं, जो दूसरों की उक्तियों का खण्डन करने में ही लगे रहते हैं, किन्तु श्रीबाबागुरुजी द्वारा शास्त्रों की गर्जना सुनकर और इनका (शास्त्रीय) व्यक्तित्त्व देखकर सभी (द्वेषी) विद्वान् मलिन हो जाते हैं।

यन्नीरसं ह्यपि जनैर्बहुभिस्समुक्तं
शाब्दं च तस्य परिकल्पनमर्थचर्चाः
तच्छ्रीबुधाग्रपरिपूजितपाद एष
बाबागुरुर्हि सकलं सरसीकरोति।।७७।।

जो व्याकरण-शास्त्र बहुत से लोगों द्वारा नीरस कहा गया है, उसकी परिकल्पना और अर्थ की चर्चा, ये (विद्वद्वरों से पूजित चरणों वाले) बाबागुरुजी बहुत ही सरस ढंग से करते हैं।

सूर्यं विलोक्य सहसा जगतां तमांसि
पापं विलोक्य परियान्ति नृणां तपांसि
तद्वद्विलोक्य वपुरस्य शिवार्चकस्य
नश्यन्त्यधर्मजडताश्च नृणां मलाश्च[21]।।७८।।

[21] सम्यक्चरन्ति विदुषे सुजनाः नमांसि इति पा.

सूर्य को देख कर संसार के अन्धेरे नष्ट हो जाते हैं, पाप-कर्म को देख कर (अर्थात् पाप करने से) मनुष्यों की तपस्या नष्ट हो जाती है। इसी तरह से इन शिवार्चक गुरुजी का व्यक्तित्व और धर्मचर्या देखकर, लोगों की अधर्म रूपी जड़ता और मस्तिष्क के मलों (कचरे) का नाश हो जाता है।

बाबागुरोश्श्रुतिपरा विमला हि वाणी
मात्सर्यदोषरहिता समभावयुक्ता
तेजस्विशास्त्रवचनैर्हृदयस्य हर्षं
संवर्धयेदपि नृणां पथबोधकर्त्री।।७९।।

वेदसम्मत, विमल, मात्सर्य-दोष से रहित, समानता का भाव रखने वाली, श्रीबाबागुरुजी की सरस्वती, तेजस्वी शास्त्रवचनों से, मनुष्यों के हृदय का हर्ष बढ़ाती है और उन्हें सत्पथ का बोध कराती है।

गङ्गामुपास्य सकलेषु बुधेषु मान्यश्-
शम्भुञ्च बिल्वतुलसीकरवीरपुष्पैर्-
नित्यानि शास्त्रकथितानि शुभानि यानि
बाबागुरुर्न हि कदापि च सञ्जहाति।।८०।।

बेलपत्र, तुलसी और कनेर के फूलों से भगवान् शिव की पूजा करके और गङ्गा की उपासना करके, सारे विद्वानों में जो सम्माननीय

हैं, ऐसे श्रीबाबागुरुजी कभी भी, शास्त्रों में कहे हुए, शुभकार्यों एवं नित्य-कर्मों को छोड़ते नहीं है।

सूर्यो भरेन्न च भरेज्जगति प्रभातं
अस्तङ्गमी भवतु वा कमलप्रियार्को
बाबागुरोस्तु सकलं श्रुतिशास्त्रगम्यं
गङ्गारतिं न हि जहाति शिवैकचित्तम्।।८१।।

चाहे सूरज इस संसार में प्रभात (प्रकाश को) न भरे, चाहे कमलों को प्रेम करने वाला वह अर्क (सूर्य) अस्त हो या ना हो, किन्तु वेद और शास्त्र का आचरण करने वाला, शिवमात्र से शोभित श्रीबाबागुरुजी का चित्त, कभी भी गङ्गाजी में भक्ति को नहीं छोड़ सकता।

यस्तु स्वकीयधनवारिसुवर्षणैश्च
निर्वित्तविप्रभरणैश्श्रुतिबोधदानैः
आर्द्रीकरोति पुरुषोऽर्थविहीनविप्रान्
कं शारदार्चनरतं न सुखीकरोति।।८२।।

जो अपने (सर्वकारीय-अध्यापन-प्राप्त) धन की बारिश से, गरीब ब्राह्मणों के भरण-पोषण से, वेद-ज्ञान का दान करने से, शास्त्रीय-अर्थ-विहीन-ब्राह्मणों को आर्द्र करते हैं (भिगोते हैं), इस प्रकार, वे किस सरस्वती की आराधना में लगे रहने वाले मनुष्य को सुखी नहीं करते?

काव्येषु यस्य सकलेषु तथार्थवत्सु
तथ्यप्रभैकमिहिरा शुभलोकदा च
बुद्धिः पुराणशरणैककथासु नूनं
धावत्यहो स मनुजैर्वद किं न पूज्यः।।८३।।

जिनकी, सभी अर्थवान् काव्यों में और पुराण ही हैं शरण जिसमें, ऐसी कथाओं में, नए तथ्य रूपी प्रभाओं के सूर्य के जैसी और शुभ-लोक को देने वाली बुद्धि दौड़ती है, बताओ वे किन मनुष्यों द्वारा पूज्य नहीं हैं? अर्थात् सभी के द्वारा पूज्य हैं।

मुद्रारहस्यकथने शकुनादिशास्त्रे
स्वप्नस्य दुष्फलशुभादिफलार्थकल्पे
योगे नये प्रतिपदं नवतथ्यवक्त्री
बाबागुरोर्विजयते द्रुतगामिबुद्धिः।।८४।।

मुद्राओं का रहस्य कहने में, शकुन आदि विचार करने में, स्वप्न का शुभाशुभ विवेचन करने में, योग और नीति-शास्त्र में भी, प्रत्येक पद पर, नए तथ्य को कहने वाली, श्रीबाबागुरुजी की द्रुतगामी बुद्धि ही विजयी होती है।

चेष्टां विलोक्य च गतीर्मुखनेत्रभावान्
नानानुमानकरणाद् गतनिश्चयार्थः

नुर्नैव केवलमहो प्रकृतेर्गुणाँश्च
जानाति तादृशमतित्त्वसरो[22] गुरुर्मे।।८५।।

वे हमारे गुरुजी, व्यक्ति के मुख-नेत्रादि के भाव, उसकी चाल-ढ़ाल, चेष्टा आदि को देखकर अनेक अनुमान-आदि के द्वारा निश्चित-अर्थ को प्राप्त करते हैं (मतलब उसके बारे में काफी जान जाते हैं।) और सिर्फ मनुष्य नहीं, अपितु इस प्रकृति के गुणों को देखकर भी वे प्रकृतिविषयक तथ्यों[23] को उजागर करते हैं – ऐसी बुद्धिमत्ता को धारण करने वाले हमारे गुरुजी हैं।

श्राद्धादिधर्म्यविधिषूत महाविचारी
यज्ञादिदेवविधिषूद्धृतलभ्यतत्त्वः
आचारपालनविधौ भुवि चैकवीरो
बाबागुरुर्जगति नम्यपदं गतोऽहो।।८६।।

श्राद्ध आदि धार्मिक विधियों में महान् विचारशील, यज्ञादि देव-विधियों में प्राप्त करने योग्य तत्त्व को प्राप्त करने वाले, आचार-पालन की विधि में धरती के प्रमुख वीर, वे श्रीबाबागुरुजी पूज्य-पद को प्राप्त हुए हैं।

22 तादृशस्य मतित्त्वस्य सर इव, तादृशमतित्त्वसरः

23 जैसे आज कपिला रंग की बिजली चमकी तो हवा चलेगी, अमुक पक्षी की आवाज सुनाई दी तो ये अर्थ है, अमुक जीव का अमुक अवसर पर दर्शन हुआ तो ये होगा इत्यादि विषयक।

सोऽसौ गुरुर्नरवरे धृतिमद्भिरर्च्यो
विप्रैश्च शाब्दिकगणैश्श्रुतिमद्भिरर्च्यो
वेदान्तिभिश्च सकलैर्धनवद्भिरर्च्यो
मा पृच्छ शास्त्रपथिकस्स न कैस्समर्च्यः।।८७।।

और ये गुरुजी, नरवर में धृतिमान् लोगों द्वारा अर्चनीय हैं।
ब्राह्मणों, शाब्दिकों और श्रुतिमान् लोगों द्वारा पूजनीय हैं।
वेदान्तियों और धनवानों के द्वारा भी समर्चनीय हैं।
अरे, वे शास्त्रों के पथिक, किसके द्वारा पूज्य नहीं हैं? अर्थात् सभी के द्वारा पूजनीय हैं।

यो नारिकेल इव सञ्चरतीह सम्यक्
छात्रेभ्य आशुफलदश्श्रुतिशास्त्रदानैः
कालं निरीक्ष्य परिसंवृतसंस्थितीश्च
तत्तद्विधेयवचसां कुरुते प्रवाहम्।।८८।।

जो नारियल के समान स्वभाव का आचरण करने के द्वारा, श्रुति-शास्त्र प्रदान करने से, छात्रों के लिए तुरन्त फलदायक हैं, ये श्रीबाबागुरुजी समय को देखकर (चारों तरफ की स्थितियों को देख कर) उन-उन विधेय वचनों का प्रवाह करते हैं। (अर्थात् यथाकाल तथावाणी गुण वाले हैं)

आयान्ति नाम विदुषोऽस्य निशम्य दूराद्

द्रष्टुं जना नरवरं भृतविस्मयास्ते
बाबागुरुः क इति तेऽपि विलोक्य चैनं
सारल्ययुक्तवपुषं नहि विश्वसन्ति[24] ।।८९।।

इन विद्वान् गुरुजी का नाम सुनकर आश्चर्य से भरे हुए लोग, दूर-दूर से नरवर आते हैं और 'बाबा गुरु जी कौन हैं ?' ऐसा पूछते हैं, लेकिन इनके सरलतायुक्त (आडम्बरहीन, दिखावे से दूर) व्यक्तित्व को देखकर उन्हें सहसा यकीन नहीं होता कि ये ही गुरुजी हैं।

यस्यावलोकनविधौ हि समस्तशास्त्र-
व्याख्या विबुद्धमनुजैः परिलक्ष्यतेऽपि
तस्य स्मितस्य कविराट् शतधा विवेकं
कर्तुं समर्थ इति मे गुरुरस्ति दिव्यः।।९०।।

जिनके अवलोकन की विधि में प्रबुद्ध लोगों को सभी शास्त्रों की व्याख्याएँ परिलक्षित होती हैं, उनकी स्मित (मुस्कान) का कविराज, सैकड़ों प्रकार से विवेचन करने में समर्थ है, इस प्रकार के वे हमारे गुरुजी दिव्य पुरुष हैं।

यश्चैव शास्त्रनिधिको[25] मुखभावविज्ञो[26]
नानाविधानकलनाकरणे[27] समर्थो

[24] सारल्ययुक्तवपुषं सहसाऽतिहृष्टाः इति पा.

[25] शास्त्रनिधिरेव शास्त्रनिधिकः।

[26] यश्चैव शास्त्रनिधिरास्यविभावविज्ञ इति पा.

विद्युत्समा मतिरहो क्षणदीप्तभासा[28]
बाबागुरोस्सुवचसां कुरुते शताख्याः।।९१।।

और जो शास्त्रों का निधि, मुखादि के भावों को जानने वाला, अनेक प्रकारक-विधानों के लक्ष्यकरण को आकारित करने में समर्थ है (विधि-विधान के लक्ष्यों को आकार देने वाला, सफल करने वाला), जिसकी बुद्धि बिजली के समान, एक क्षण-मात्र में ही बहुत तीव्र-प्रकाश करती है, इस तरह का व्यक्ति, श्री बाबागुरुजी के वाक्यों का सैकड़ों प्रकार से व्याख्यान करता है।

शास्त्राणां सुधयाऽभिसिञ्चति यतो निर्वित्तविप्रानसौ
मन्ये दुर्लभ एष वै भुवि तथा स्वर्गेऽपि न प्राप्यते
सर्वस्स्वार्थसमुत्सुको भवति वा लोकेऽथ नाकेऽपरे
नैष्काम्येन समं ददाति पुरुषो धन्योऽस्ति बाबागुरुः।।९२।।

क्योंकि ये शास्त्रों के अमृत से निर्धन ब्राह्मणों को सींचते हैं, इसलिए धरती की बात तो छोड़ो, स्वर्ग में भी ऐसे लोग प्राप्त नहीं होते, क्योंकि इस संसार में या स्वर्ग में भी, मनुष्य, देवता इत्यादि सब स्वार्थ-समुत्सुक ही हैं, जो निष्काम-भाव से सब कुछ, (विद्या आदि) दान कर दे, ऐसे धन्य पुरुष तो श्रीबाबाजी ही हैं।

[27] नानाविधानानां कलनं, (कल्यते लक्ष्यते) तेषां आकरणे समर्थः (नानाविधान-कलनानाम् आकरणे आ-समन्तात् करणे अथवा आकारप्रदाने समर्थ इत्यर्थः)

[28] क्षणेनैव दीप्यते भासो यस्याः, तादृशी मतिः।

सकलं जीवनं यस्य गोब्राह्मणहिताय च।
विद्यायै च तपस्यायै तस्मै श्रीगुरवे नमः।।९३।।

जिनका सारा जीवन, गाय और ब्राह्मणों के हित के लिए है, विद्या के लिए समर्पित और तपस्या करने के लिए है, उन गुरुजी के लिए प्रणाम है।

परोपकारैर्लभ्यन्ते पुण्यानि च सुखानि च।
इत्येतज्जीवने यस्य तस्मै श्रीगुरवे नमः।।९४।।

परोपकार से ही पुण्य और पुण्य से सुख प्राप्त होता है, इस तथ्य को जीवन में धारण करने वाले श्री गुरुजी के लिए नमस्कार है।

महत्तां नैव जानाति निन्दतीव पुनः पुनः।
मन्ये पुण्यविघातत्त्वान्निर्ऋतिं याति दुर्मनाः।।९५।।

जो कोई दुष्ट व्यक्ति, इन गुरुजी के महत्त्व को न जानकर, बार-बार निन्दा ही करता रहता है, वह पुण्य हानि के कारण नरक को प्राप्त करता है, ऐसा मेरा मानना है।

श्रीगुरुः पुष्पवृक्षोऽस्ति सुगन्धिस्सकले वने।
छात्राः जिघ्रन्ति मोदन्ते शास्त्राणां हर्षणं महत्।।९६।।

श्रीगुरुजी, फूलों से युक्त एक वृक्ष के समान हैं, जिनसे सारे (नरवर-रूपी) वन में सुगन्धि फैल रही है, और छात्र उस सुगन्धि को सूँघकर उससे आनन्दित हो रहे हैं, वाकई शास्त्रों का हर्ष महान् है।

यो वै छात्रः पठेन्नित्यं शास्त्राण्यस्मान्महागुरोः।
भक्त्या वैदुष्यमापन्नश्चाल्पकालेन जायते।।९७।।

जो कोई भी छात्र प्रतिदिन, इन महागुरु से शास्त्रों को भक्तिपूर्वक पढ़ता है, वह थोड़े ही समय में निश्चित रूप से विद्वत्ता को प्राप्त कर लेता है।

छलैर्मात्सर्यकौटिल्यैर्दुष्टभावैर्वसेच्च चेद्।
आत्मनाशं करोत्येष विद्यां पुण्यं न वाऽऽप्नुते।।९८।।

कपट, मत्सरभाव, कुटिलता और दुष्टभाव से जो बाबागुरुजी के पास रहता है, वह अपना ही नाश करता है, वह न तो विद्या प्राप्त कर पाता है, और न ही कुछ पुण्य प्राप्त कर पाता।

कथ्यते बहुधाऽनेन वृद्धा नस्तु सरस्वती।
किन्तु विद्वत्सभाराजा चैतादृङ्नैव कुत्रचित्।।९९।।

गुरुजी प्रायः कहते रहते हैं कि हमारी सरस्वती तो वृद्धा (बूढ़ी) है, किन्तु (वह तो उनकी विद्या-विनम्रता को दर्शाता है।) गुरुजी के समान विद्वानों की सभा का राजा, कहीं भी नहीं है।

यश्श्यामसुन्दरश्शर्मा श्यामबाबात्त्वमागतः।
बाबागुरुस्ततः ख्यातो ब्रह्मचारी शिवार्चकः।।१००।।

वे पहले **श्यामसुन्दर शर्मा** थे और बाद में **श्याम बाबा** के नाम से विख्यात हुए, और उसके बाद **श्री बाबा गुरुजी** के नाम से जाने गए, ऐसे शिवभक्त वे ब्रह्मचारी हैं।

नक्षत्रग्रहमण्डलान्वितसुखे[29] चन्द्रो मुदा राजते[30]
कासारेऽपि च मीनकच्छपयुते पद्मो यथा शोभते
कैलासे च सुरासुरार्चितमहाशम्भुर्यथा भ्राजते
तद्वत्सोऽपि विराजते नरवरे विद्वत्सु बाबागुरुः।।१०१।।

जैसे नक्षत्र-ग्रहादि के मण्डल से युक्त रात्रिकालीन आकाश में चन्द्रमा शोभित होता है, जैसे मछली, कछुआ आदि से युक्त तालाब में कमल का फूल शोभायमान होता है, जैसे देवता और राक्षस आदि से पूजित महाशम्भु कैलास-पर्वत पर शोभित होते हैं, वैसे ही नरवर में सभी विद्वानों के मध्य श्रीबाबागुरुजी भी शोभा को प्राप्त करते हैं।

---

[29] नक्षत्राणि अश्विनीभरण्यादीनि, ग्रहाः भौमशन्यादयः, तेषां यन्मण्डलं, तेनान्विते, सु शोभने (रात्रिकालिके) खे गगने

[30] यद्वच्छुक्लमहाष्टमीनिशि च खे चन्द्रो मुदा राजते इति पा.

शास्त्रार्थविस्मयकरं सकलार्थविज्ञं
बाबागुरुं बुधमणिं धृतसर्वशास्त्रम्
लोकेऽप्यलौकिकगतिं शिवलोकसक्तं
श्रीमत्स्वरूपनुतहर्षभरं[31] नमामि।।१०२।।

शास्त्र का अर्थ ज्ञापन करने से जो लोगों को आश्चर्यचकित कर देते हैं, सभी प्रकार के श्रुति सम्बन्धी सभी अर्थों को विशिष्टतया जानने वाले हैं, जिन्होंने सभी शास्त्रों को धारण कर लिया है, जो इस संसार में रहते हुए भी अलौकिक गति वाले है, जो शिवलोक में ही आसक्त हैं, और श्रीमत्स्वरूप मनुष्यों द्वारा भी जो प्रणम्य हैं, इस प्रकार के हर्षित स्वरूप वाले बाबागुरुजी को मैं नमस्कार करता हूं।

यच्च स्थापितमस्ति वाऽथ हनुमद्धामाऽतिरम्याश्रमः
अश्वत्थस्थविशालदेवभवनं यस्यास्य आस्थायते
वेदेभ्योऽर्पितजीवनास्सुबटुका धर्माश्रयाश्शाब्दिकाः
जीव्योज्जीवनपद्धतिं हि भवतां जानन्ति निर्देशनैः।।१०३।।

हे गुरो! आपने जो **हनुमद्-धाम** नामक अति रमणीय आश्रम स्थापित किया है, उस आश्रम के मुख (मुख्य द्वार) पर स्थित जो विशाल देव-मन्दिर (हनुमान्-मन्दिर) है, वह आस्था की तरह आचरण कर रहा है, अर्थात् सबको श्रद्धा के लिए प्रेरित कर रहा

---

[31] श्रीमतां स्वरूपैर्नुतश्चासौ हर्षभरः, हर्षस्य भरो (अतिशयो) यस्मिन्। हर्षयुतमिति पा.।

है। यहाँ आपके आश्रम में वेद-शास्त्रों के लिए अर्पित जीवन वाले, धर्म ही है आश्रय जिनका ऐसे अच्छे ब्राह्मण, वैयाकरण, जीवन को उत्कृष्टतया जीने की विधि आपके निर्देशनों से जानते हैं।

यन्मङ्गलं नरवरे च विलोक्यतेऽद्य
यच्छास्त्रचर्यमपि विप्रगणैश्च चर्यम्
यत्सौरभं सुमनसामनुभूयते वा
बाबागुरोस्सकलमेव हि तत्प्रभावात्।।१०४।।

आज जो कुछ भी नरवर में मङ्गल देखा जा रहा है, और ब्राह्मणों के द्वारा आचरणीय जो शास्त्रचर्या है एवं यहाँ के पुष्पों में (शोभन मन वाले लोगों में) जो सुगन्ध अनुभूत होती है, वह सब श्रीबाबागुरुजी के प्रभाव से है।

न च शतैर्विततैरपि संस्तवैश्-
शिवचरित्रमहो गदितुं क्षमश्-
श्रुतिपुराणरसालयसद्गुरोस्-
सुविरमामि रमेऽथ सुखालये।।१०५।।

मैं विस्तृत स्तुत्यात्मक सौ श्लोकों के द्वारा भी, उन कल्याणरूपी चरित्र (श्रीबाबागुरुजी) का वर्णन करने में सक्षम नहीं हूं, क्योंकि वे सद्गुरु तो, वेद-पुराण-रूपी रसों के आलय-स्वरूप (प्रतिष्ठान)

हैं। इसलिए मैं भी (अपने मन-रूपी अथवा बाबाचरित्ररूपी) सुखालय में रमण करता हूं और इस शतक को विराम देता हूं।

****

।। श्रीहरिश्शरणम्।।

****

आचार्यहिमांशुगौडस्य संस्कृतकाव्यरचनाः (काश्चन प्रकाशिताः काश्चन अप्रकाशिताश्च)		
१	श्रीगणेशशतकम्	गणेशभक्तिभृतं काव्यम्
२	सूर्यशतकम्	सूर्यवन्दनपरं काव्यम्
३	पितृशतकम्	पितृश्रद्धानिरूपकं काव्यम्
४	मित्रशतकम्	मित्रसम्बन्धे विविधभावसमन्वितं काव्यम्
५	श्रीबाबागुरुशतकम्	श्रीबाबागुरुगुणवन्दनपरं शतश्लोकात्मकं काव्यम्
६	भावश्रीः	विविधविद्वद्भ्यो लिखितानां पत्रकाव्यानां सङ्ग्रहः
७	वन्द्यश्रीः	वन्दनाभिनन्दनादिकाव्यसङ्ग्रहः
८	काव्यश्रीः	बहुविधपद्यगीतकवितादिसङ्ग्रहः
९	भारतं भव्यभूमिः	भारतभक्तिसंयुतं काव्यम्
१०	दूर्वाशतकम्	दूर्वामाश्रित्य विविधविचारसंवलितं शतश्लोकात्मकं काव्यम्
११	नरवरभूमिः	नरवरभूमिमहिमख्यापकं काव्यम्
१२	नरवरगाथा	पञ्चकाण्डान्वितं काव्यम्
१३	नारवरी	नरवरस्य विविधदृश्यविचारवर्णकं काव्यम्
१४	दिव्यन्धरशतकम्	काल्पनिकनायकस्य गुणौजस्समन्वितं काव्यम्
१५	कल्पनाकारशतकम्	कल्पनाकारचित्रकल्पनामोदवर्णकम्
१६	कलिकामकेलिः	कलौ कामनृत्यवर्णकं काव्यम्
१७	यज्ञसम्राट्शतकम्	श्रीप्रबलजीमहाराजमाहात्म्यनिरूपकं विविधविचारवलितम् अभिनन्दनात्मकं काव्यम्
१८	समर्थश्रीशतकम्	श्रीगोपालजीमहाराजसम्बन्धे विविधविचारसमन्वितं शिखरिणीबद्धं काव्यम्